अध्याय 20

जल संसाधन

इस अध्याय में आप सीखेंगे किः

- भारत में जल संसाधन, उसका वितरण, सिंचाई प्रबंधन के साथ-साथ बहुउद्देशीय नदी घाटियों के बारे में जानकारी कैसे प्राप्त होगी।
- बहुउद्देशीय परियोजनाओं के विभिन्न लाभ क्या-क्या हैं और भारत की प्रस्तावित बहउद्देशीय नदी परियोजनाएँ कौन-कौन सी हैं।

जल संसाधन (Water Resources)

भारत में उपयोग में आने वाले कुल जल का सर्वाधिक 93 प्रतिशत उपयोग कृषि में, 4 प्रतिशत उद्योगों में तथा शेष 3 प्रतिशत जल का उपयोग घरेलू कार्यों में होता है।

भूमिगत जल विकास—देश में भूमिगत जल क्षमता के मूल्यांकन का कार्य केन्द्रीय भूमिगत जल बोर्ड द्वारा किया जाता है।

सिंचाई

वर्षा के अभाव में खेतों को कृत्रिम ढंग से जल देने की क्रिया को सिंचाई करना कहा जाता है। भारत एक उष्ण-कटिबन्धीय देश है जिसमें कृषि मुख्यतः मानसूनी वर्षा पर ही निर्भर है, किन्तु इस वर्षा की प्रकृति एवं उसके वितरण में कई दोष पाये जाते हैं। इन दोषों को दूर करने एवं नियमित कृषि करने का सर्वोत्तम उपाय सिंचाई की व्यवस्था करना है।

सिंचाई की आवश्यकता

वर्षा की अनिश्चितता—भारत में वर्षा समय एवं स्थान की दृष्टि से अनिश्चित होती है तथा विभिन्न क्षेत्रों में उसकी मात्रा भी भिन्न होती है। इसी कारण नियमित रूप से कृषि करने के लिए सिंचाई अनिवार्य है।

वर्षा का असमान वितरण—यद्यपि देश में वर्षा का औसत 109 सेण्टीमीटर है, किन्तु इसका क्षेत्रीय वितरण असमान है। उदाहरण के लिए, पश्चिमी तटीय क्षेत्रों और असम प्रदेश में 250 सेण्टीमीटर से भी अधिक वर्षा होती है। उत्तरी मैदान और प्रायद्वीप के पूर्वी भाग में यह 100 से 200 सेण्टीमीटर ही होती है। पंजाब के मैदान और दक्षिण प्रायद्वीप के उत्तरी-पश्चिमी भागों में वर्षा की मात्रा केवल 25 से 100 सेण्टीमीटर होती है। गंगा नदी के पूर्वी मैदान तथा पश्चिमी समुद्री तट को छोड़ कर अन्य सभी भागों में वर्षा की कमी से सदैव अकाल का संकट बना रहता है। राजस्थान, हरियाणा और दक्षिणी पंजाब में तो बहुत कम वर्षा होने से सिंचाई के बिना खेती करना सम्भव नहीं है। इसी प्रकार दक्षिणी पठार के मध्यवर्ती एवं आन्तरिक भागों में कृषि बिना समुचित सिंचाई के सम्भव नहीं है, क्योंकि इन प्रदेशों में या तो सूखा पड़ता है या फिर वर्षा बहुत कम होती है।

वर्षा का कुछ ही महीनों में सीमित होना—भारत के सभी भागों में एक ही मौसम में वर्षा नहीं होती। शीतकाल में केवल दक्षिणी-पूर्वी भाग में ही वर्षा होती है और शेष भाग सूखे रहते हैं। वर्षा का 74% जून से सितम्बर के महीनों में दक्षिणी-पश्चिमी मानसून द्वारा प्राप्त होता है। ऐसी स्थिति में वनस्पति अथवा कृषि उत्पादन के लिए लम्बे शुष्क काल में सिंचाई आवश्यक हो जाती है।

जनसंख्या में वृद्धि—भारत में 2011 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या 121 करोड़ है। प्रतिवर्ष बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए अधिकाधिक मात्रा में खाद्यानों की आवश्यकता पड़ती है।

विशेष फसलों के लिए अधिक जल की आवश्यकता—चावल, गन्ना, जूट, मिर्ची, प्याज, लहसुन, आलू, आदि फसलों के लिए नियमित रूप से अधिक जल की आवश्यकता पड़ती है।

मिट्टी की प्रकृति—उत्तरी मैदान तथा नदियों के डेल्टाओं में उपजाऊ कांप मिट्टी पायी जाती है जिससे थोड़ी सिंचाई करने से ही उत्पादन बढ़

जाता है। अन्य भागों में बलुही और दोमट मिट्टी अधिक समय तक जल रोकने में असमर्थ रहती है, अत: उसे कृषि योग्य बनाए रखने के लिए बार-बार सिंचाई करना आवश्यक हो जाता है।

भारत में वर्षा प्राय: तेज बौछारों के रूप में होती है जो कृषि के लिए हितकर नहीं है।

चारागाहों के विकास के लिए—पशु पालन और दुग्ध व्यवसाय को प्रोत्साहन देने के लिए प्राकृतिक चारागाहों की रक्षा करना आवश्यक है तथा नए चारागाहों के लिए पर्याप्त मात्रा में जल की उपलब्धि होना आवश्यक है।

व्यावसायिक फसलों में वृद्धि के लिए—कृषि के अन्तर्गत कुल क्षेत्र के 20% पर व्यावसायिक फसलें पैदा की जाती हैं, जिनसे कृषि उत्पादन के कुल मूल्य का 35% प्राप्त होता है। इन फसलों के अन्तर्गत केवल 16% भाग को ही सिंचाई की सुविधाएं उपलब्ध हैं। चूंकि व्यावसायिक फसलों के निर्यात द्वारा भारत को प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप में लगभग 50% विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है और देश के उद्योगों के लिए कच्चा माल मिलता है, अत: इनके उत्पादन में वृद्धि करने के लिए सिंचाई की विशेष आवश्यकता पड़ती है।

भारत में सिंचाई

योजना आयोग ने सिंचाई साधनों संबंधी योजनाओं को तीन वर्गों में बाँटा है—

- **वृहद सिंचाई योजनाएं**—इस वर्ग में उन सिंचाई योजनाओं और कार्यक्रमों को सम्मिलित किया जाता है जिनके अन्तर्गत 10 हजार से अधिक हेक्टेअर का कृषि योग्य क्षेत्र (Culturable Command Area—CCA) आता है। इस वर्ग में नहरें एवं बहुउद्देशीय योजनाएं सम्मिलित हैं।
- **मध्यम सिंचाई योजनाएं**—इस वर्ग में उन सिंचाई योजनाओं को सम्मिलित किया जाता है जिनके अन्तर्गत कृषि योग्य क्षेत्र 2,000 हेक्टेअर से अधिक किन्तु 10,000 हेक्टेअर से कम हो।
- **लघु सिंचाई योजनाएं**—इस वर्ग में उन सिंचाई योजनाओं को सम्मिलित किया जाता है जिनका कृषि योग्य क्षेत्र 2,000 हेक्टेअर या उससे कम हो। इस वर्ग की योजनाओं में कुएं, तालाब और छोटी-छोटी नहरों को सम्मिलित किया जाता है।

सिंचाई हेतु सुविधाएं

उत्तरी भारत के मैदान और नदियों के डेल्टाओं में सिंचाई की विशेष सुविधाएं पायी जाती हैं। इसके मुख्य कारण इस प्रकार हैं—

1. ये भाग समतल हैं। इन भागों की भूमि का ढाल इतना धीमा है कि नदियों के ऊपरी भागों से निकली हुई नहरों का जल सरलता से ही सारे मैदान में फैल जाता है।
2. **उत्तरी भारत की भूमि अधिकांशत**—नदियों द्वारा लायी गयी मिट्टी से बनी होने के कारण बड़ी उपजाऊ हैं। अत: इस मिट्टी में जल मिल जाने पर उत्तम फसलें पैदा की जा सकती हैं तथा सिंचाई पर किया गया व्यय कुछ ही वर्षों में पूरा किया जा सकता है।
3. कई भागों में वर्षा का जल भूमि में रिसकर धरातल के नीचे जमा हो जाता है। इसे कुएं खोदकर निकाला जा सकता है।
4. इन भागों में पथरीला भाग कम है अत: धरातल मुलायम है इससे नहरें बनाने में सुगमता रहती है और व्यय भी अधिक नहीं हो पाता है।
5. उत्तरी मैदानों में हिमालय से निकलने वाली सदावाहिनी नदियां बहुत हैं जिनमें अथाह जलराशि भरी रहती है। अत: इनसे जो नहरें निकाली जाती हैं वे भी वर्षभर भरी रहती हैं और लगातार सिंचाई की जा सकती है। उत्तरी भारत के मैदानों एवं तटीय मैदानों में अथाह भूमिगत जल संसाधन पाए जाते हैं। अत: कुओं एवं नलकूपों द्वारा सरलता से सिंचाई की जा सकती है।

सिंचाई के साधन

भारत की भौतिक रचना में विभिन्नता होने के कारण सिंचाई के विभिन्न साधन काम में लाये जाते हैं। उत्तरी भारत में विशेषकर नहरों और कुओं से तथा दक्षिण के प्रायद्वीपीय भागों में तालाबों द्वारा सिंचाई की जाती है।

भारत की सिंचाई व्यवस्था में सबसे प्रमुख स्थान कुएँ एवं नलकूप का है। उसके बाद नहरों का स्थान आता है। विभिन्न साधनों का विवरण अग्रांकित है।

नहरें (Canals)

भारत में सिंचाई का मुख्य साधन नहरें हैं। अधिकांशत: नहरें या तो उत्तरी भारत के मैदानों और तटवर्ती नदियों के डेल्टाओं में पायी जाती हैं। नहरें बनाने के लिए मुख्यत: दो बातों की आवश्यकता होती है: समतल भूमि और नदियों से अथवा बांधों से निरन्तर जल की आपूर्ति। ऐसी आदर्श अवस्था उत्तरी भारत में नदियों के विशाल मैदान में मिलती है। नहरों में जल या तो नदियों से पहुंचाया जाता है या कृत्रिम तालाबों से। उत्तरी भारत की प्राय: सभी नहरों में साल भर नदियों द्वारा जल मिलता रहता है। दक्षिण की अधिकांश नहरों में जलाशयों में एकत्रित किया गया जल मिलता है। क्योंकि यहां की नदियां गर्मियों में सूख जाती हैं। नहरें दो प्रकार की हाती हैं

1. **अनित्यवाही या बाढ़ की नहरें (Inundation Canals)**—ऐसी नहरों को बाढ़ के समय अथवा वर्षा ऋतु में ही जल मिलता है अतएव ऐसी नहरें अक्टूबर से मई तक (जल की कमी से) सूखी रहती हैं।
2. **नित्यवाही नहरें (Perennial Canals)**—उन नदियों अथवा बड़े बांधों से निकाली जाती हैं जिनमें वर्षभर जल भरा रहता है। नदी के जल को कभी-कभी बांध या एनीकट बनाकर भी रोक दिया जाता है और फिर इस रोके गये जल से नहरों द्वारा आस-पास के प्रदेश के खेतों में सिंचाई की जाती है।

नहरों द्वारा सिंचाई के लाभ

नहरों द्वारा सिंचाई किये जाने से निम्न लाभ होते हैं—

1. सिंचाई से शुष्क प्रदेश के कृषि योग्य क्षेत्र हरे-भरे खेतों में बदल जाते हैं। भारत जैसे बढ़ती आबादी के देश के लिए ऐसी अतिरिक्त कृषि योग्य भूमि वरदान है। पंजाब और हरियाणा की नहरी बस्तियां तथा उत्तर प्रदेश, उत्तरी राजस्थान, मध्य प्रदेश और दक्षिण के पठार के सिंचित प्रदेश इसके सजीव उदाहरण हैं।

2. नहरों ने बड़ी सीमा तक अकाल की भयानक आशंका को निर्मूल कर दिया है और आर्थिक सुख-समृद्धि के लिए एक नूतन अध्याय का सूत्रपात किया है। अकालग्रस्त क्षेत्रों में सिंचाई की सुविधाएं उपलब्ध करना उनके विरुद्ध बीमा कराने के समान है। सिंचाई के क्षेत्र-विस्तार की दृष्टि से डॉ. स्टाम्प के शब्दों में, 'प्रतिवर्ष भारत एक नए मिस्र देश की वृद्धि कर लेता है।'
3. किसी क्षेत्र में सिंचित भूमि की उपज में असिंचित भूमि की अपेक्षा प्रति हेक्टेअर 100 से 900 प्रतिशत तक वृद्धि हो सकती है। परीक्षणों से ज्ञात हुआ कि सिंचित क्षेत्र में चावल की उपज में 100 प्रतिशत, गेहूं में 80 प्रतिशत, जौ में 60 प्रतिशत, बाजरा में 49 प्रतिशत, मकई में 65 प्रतिशत वृद्धि हुई है।
4. गन्ना, जूट, कपास, फल, गरम मसाले, सब्जियों आदि व्यापारिक फसलों के उत्पादन में सिंचित क्षेत्रों में ही विशेष उन्नति हुई है।
5. नहरों से उन विशाल क्षेत्रों के लिए यातायात तथा संचार साधनों की सन्तोषजनक व्यवस्था हो जाती है जहां सड़कों तथा रेलमार्गों का सर्वदा अभाव है। उदाहरणार्थ, पूर्वी डेल्टा की नहरों द्वारा सिंचाई और यातायात दोनों ही कार्य होते हैं।
6. साधारणतः नहरों में लगायी गयी पूंजी से सरकार को 6 से लेकर 7 प्रतिशत तक की आय होती है। इससे एक लाभ यह भी है कि अकाल सहायता सम्बन्धी कार्यक्रम में सरकारी व्यय में भारी कमी हो जाती है।
7. सिंचित क्षेत्रों में निरन्तर वृद्धि होने एवं वहाँ पर उन्नत किस्म की बहु फसली कृषि के विस्तार के कारण ही भारत खाद्यानों में आत्म-निर्भर बन सका है। इससे किसानों की आर्थिक स्थिति में भी विशेष सुधार हुआ है।
8. लघु सिंचाई योजना (कुएँ, नलकूप, छोटे तालाब आदि) थोड़ी सरकारी सहायता से या सहकारिता से कृषक स्वयं लागू कर उससे शीघ्र लाभ उठा सकता है।

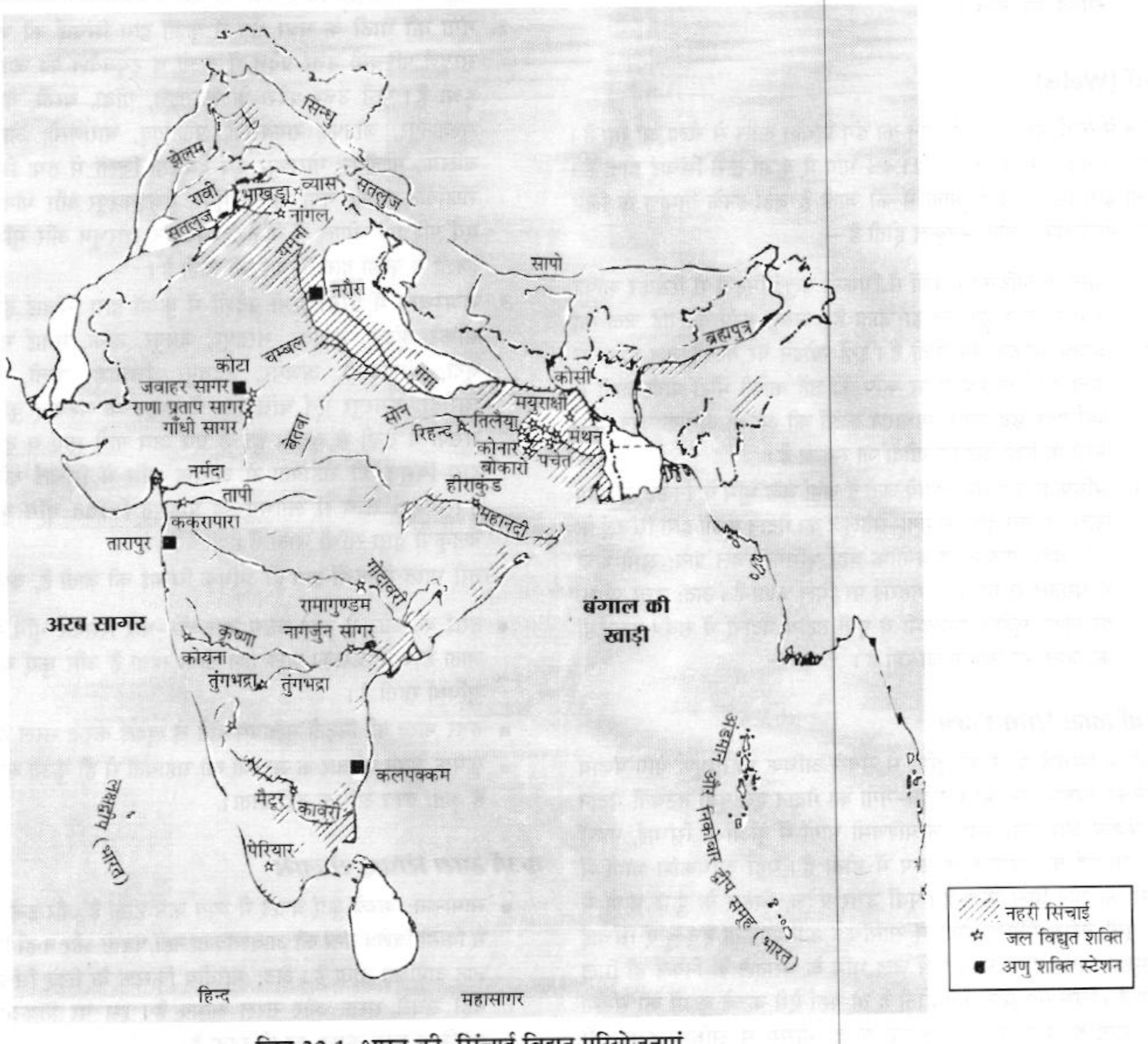

चित्र 20.1: भारत की सिंचाई विद्युत परियोजनाएं

नहरों द्वारा सिंचाई से हानियाँ

सामान्यत: अधिक सिंचाई किए जाने से ही निम्न हानियां होती हैं:

- अधिक सिंचाई से निचले या एकत्रित पानी वाली भूमि के धरातल पर हानिकारक नमक (Salts) जम जाते हैं जिससे मिट्टी का उपजाऊपन नष्ट हो जाता है। पंजाब, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र एवं राजस्थान के नहरी क्षेत्रों में अधिक पानी के कारण ही क्षार फैलने से भूमि कल्लर या बंजर बन जाती है। इसे सुधारना भी कठिन कार्य है।
- जिस भूमि में नहरी जल जमा होता रहता है वहाँ मच्छर उत्पन्न हो जाते है एवं वहां दलदल बन जाती है। अत: मलेरिया और अन्य संक्रामक रोगों के फैलने का डर रहता है।
- नहरों के किनारे वाष्पीकरण की क्रिया से कई प्रकार के क्षार (Salts) जम जाते हैं जो कि नहरों की सुरक्षा की दृष्टि से हानिकारक होते हैं।

कुएँ (Wells)

भारत में कुओं द्वारा सिंचाई करने का ढंग प्राचीन काल से चला आ रहा है। कुल सिंचित भूमि के लगभग 21.4% भाग में कुओं द्वारा सिंचाई होती है। कुओं द्वारा सिंचाई उन्हीं भागों में की जाती है जहां इनके निर्माण के लिए निम्न भौगोलिक दशाएं अनुकूल होती हैं—

1. भारत के अधिकांश भागों में चिकनी बलुई मिट्टी से रिसकर काफी मात्रा में जल एकत्रित हो जाता है। अस्तु, कांप की तहें जल का अगाध भण्डार बन जाती हैं। इन्हें खोदने पर काफी जल प्राप्त हो जाता है। जिन स्थानों पर कांप की तहें काफी मोटी पायी जाती हैं वहाँ गहरे छेद करके साधारण कुओं की अपेक्षा अधिक जल प्राप्त करने के लिए नलकूप खोदा जा सकता है।
2. अधिकतर कुएं वहीं बनाये जाते हैं जहां जल भूमि के निकट ही पाया जाता हो। इस दृष्टि से गंगा-सतलुज का मैदान कुओं द्वारा सिंचाई के लिए बड़ा उपयुक्त है क्योंकि वहां भूमिगत-जल प्राय: सभी क्षेत्रों में धरातल से थोड़ी ही गहराई पर मिल जाता है। अत: उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब, पश्चिमी व पूर्वी तटीय मैदानों में सर्वत्र नलकूपों का जाल-सा बिछता जा रहा है।

कुओं द्वारा सिंचित क्षेत्र

कुओं से सिंचाई करने की दृष्टि से सबसे अधिक महत्वपूर्ण भाग पंजाब से लेकर बिहार तक का सतलुज-गंगा का मैदान एवं पूर्वी तटवर्ती मैदान है। पंजाब और उत्तर प्रदेश के पश्चिमी भागों में कुओं से सिंचाई, नहरों द्वारा सिंचाई के सहायक के रूप में होती है। यहां अधिकांश भागों में नहरों का जल मिल जाता है। पूर्वी उत्तर प्रदेश, बिहार के कुछ भागों में एवं पूर्वी तटीय मैदानी भागों में सामयिक आवश्यकता हेतु कुएं सिंचाई के मुख्य साधन हैं। इन भागों में जल भूमि के धरातल के निकट ही मिल जाता है। जिस वर्ष वर्षा कम होती है तो यहां ऐसे कच्चे कुओं की संख्या बढ़ जाती है। ऐसे कच्चे कुएं एक या दो मौसम से अधिक काम नहीं देते। बिहार के पूर्व में वर्षा की अधिकता के कारण प. बंगाल में सिंचाई की आवश्यकता ही नहीं पड़ती।

पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा, उत्तरी गुजरात एवं राजस्थान में जल अधिक गहराई पर मिलता है। अत: सामान्यत: पक्के कुएं ही बनाए जाते हैं। इस प्रकार के कुओं से यद्यपि जल की पूर्ति काफी होती है किन्तु इनके निर्माण में एवं जल के दोहन में चरस, रहट, मोटर आदि द्वारा जल निकालने की व्यवस्था में व्यय भी अधिक होता है।

1. कुओं से सिंचाई प्राप्त करने वाले मुख्य क्षेत्र **तमिलनाडु का दक्षिणी भाग,** नीलगिरी, इलायची की पहाड़ियों का पूर्वी भाग एवं पूर्वी तटीय मैदानी भाग हैं जो गुन्टूर से कोयम्बटूर होता हुआ तिरुनेलवेली तक त्रिभुजाकार रूप में फैला है। राजस्थान के पूर्वी व दक्षिणी-पूर्वी भाग, महाराष्ट्र के पठारी भाग, मध्य प्रदेश एवं गुजरात में भी कुएं अधिक पाये जाते हैं।
2. **गंगा की घाटी** के मध्य क्षेत्र में कुओं द्वारा सिंचाई की जाती है। सम्पूर्ण पश्चिमी उत्तर प्रदेश में कुओं व ट्यूबवैल का जाल बिछा हुआ है। पूर्वी उत्तर प्रदेश के बहराइच, गोंडा, बस्ती, फैजाबाद, सुल्तानपुर, जौनपुर, रायबरेली, प्रतापगढ़, वाराणसी, आजमगढ़, बलिया, गाजीपुर, गोरखपुर एवं देवरिया जिलों में तथा बिहार के शाहाबाद, पटना, गया, सारन, मुंगेर, मुजफ्फरपुर और भागलपुर में एवं पश्चिमी बंगाल में बांकुड़ा, बर्दवान, वीरभूम और मुर्शिदाबाद जिलों में कुओं द्वारा सिंचाई की जाती है।
3. **राजस्थान में प्राय:** सभी प्रदेशों में कुओं द्वारा सिंचाई होती है। सीकर, झुंझुनू, अलवर, भरतपुर, जयपुर, टोंक, सवाई माधोपुर, बूंदी, भीलवाड़ा, अजमेर, उदयपुर, चित्तौड़, पाली, जालौर, सिरोही, डूंगरपुर एवं बांसवाड़ा में 1960 के पश्चात् कुओं की संख्या में तेज़ी से वृद्धि हुई है एवं अब गहरे कुएं व ट्यूबवैल द्वारा विद्युत की सहायता से अधिक भूमि में सिंचाई की जाती है। सम्पूर्ण राज्य में लगभग 54 प्रतिशत सिंचित भूमि कुओं व नलकूपों द्वारा सींची जाती है।

उत्तरी भारत में कुओं द्वारा ही अधिक सिंचाई की जाती है, क्योंकि:

- तराई की ओर से आने वाला जल धीरे-धीरे रिसकर भूमि में समा जाता है अत: उसका जल-तल ऊंचा रहता है और कुएं बनाने में सुविधा रहती है।
- उत्तर भारत की मिट्टी मुलायम होने से खुदाई करना सरल है।
- कृषक अपने परिवार के सदस्यों की सहायता से ही कुआं बना लेता है अत: व्यय अधिक नहीं होता।

कुओं द्वारा सिंचाई से लाभ

- सामान्यत: कच्चे कुएं बनाने में व्यय कम होता है और इन्हें खोदने में किसी विशेष यन्त्र की आवश्यकता नहीं पड़ती और न ही विशिष्ट ज्ञान अपेक्षित होता है। अत: भारतीय किसान के लिए सिंचाई का यही सबसे सस्ता और सरल साधन है। इस पर नियन्त्रण एवं स्वामित्व स्वयं कृषक का ही रहता है।

- कुएं के जल में अनेक रासायनिक तत्व घुले रहते हैं; जैसे, नाइट्रेट, क्लोराइड, सल्फेट और सोडा। ये भूमि को उपजाऊ बनाकर पैदावार में वृद्धि करते हैं।
- चूंकि जल निकालने के लिए कृषक को परिश्रम करना पड़ता है अतः जल का उपयोग मितव्ययता से होता है। अतः भूमि में लवण या क्षार वृद्धि या दलदली भूमि जैसे दोष नहीं पाये जाते।

कुओं की सिंचाई के दोष

- यदि लगातार अधिक समय तक कुओं से जल निकाला जाए अथवा जिस वर्ष वर्षा कम होती है उस वर्ष भी जल की कमी पड़ जाती है।
- कुओं द्वारा सिंचाई करने में नहरों की अपेक्षा व्यय और परिश्रम दोनों ही अधिक होते हैं अतः ऐसी फसलें अधिक बोयी जाती हैं जिनसे कृषक को आर्थिक लाभ मिल सकता है (जैसे-गन्ना, तिलहन, हरा चारा, कपास या गेहूं)।
- कुओं से केवल सीमित क्षेत्र में ही सिंचाई हो सकती है। उदाहरणार्थ, कच्चा कुआं अधिक-से-अधिक प्रतिदिन 3 एकड़ और पक्का कुआं 10-15 एकड़ भूमि सींच सकता है। किन्तु ट्यूबवेल से नदी बेसिन में 100 से 200 एकड़ भूमि तक सींची जा सकती है।
- शुष्क प्रदेशों में अधिकांश कुओं का जल खारा होता है जो सिंचाई के लिए अनुपयुक्त होता हैं व फसलों को हानि पहुंचा सकता है।

नलकूप (Tubewells)

भारत में सबसे पहले गंगा की घाटी में सन् 1930 में नलकूप खोदे गये। सन् 1951 में लगभग 2500 नलकूप थे। बहुमुखी उपयोगिता के कारण इनकी संख्या में क्रमशः वृद्धि होती गई। नलकूप कुल सिंचित क्षेत्र का 31.6 प्रतिशत योगदान करता है।

साधारणतः नलकूपों के निर्माण के लिए निम्न दशाएं आवश्यक हैं—

1. इसके अन्तर्गत एक प्रदत्त पर्यावरण में उगने वाले पौधों के एक समुदाय को सम्मिलित किया जाता है।
   (i) भूमि तल के नीचे जल की मात्रा पर्याप्त होनी चाहिए जिससे वह धरातल की मांग को स्थायी रूप से पूरा कर सके।
   (ii) जल की सतह भूमि से 150-200 फीट की गहराई से अधिक नहीं हो।
   (iii) सिंचाई की मांग औसत रूप से वर्षभर में 3200 घण्टे हो।
   (iv) मिट्टी इतनी उपजाऊ हो कि नलकूप निर्माण में किया गया व्यय उस पर अधिक उत्पादन करके प्राप्त किया जा सके।

तालाब (Tanks)

तालाबों द्वारा भारत के सिंचित क्षेत्र का लगभग 6.5% भाग सींचा जाता है। भारत में सब मिलाकर लगभग 5 लाख बड़े और 60 लाख छोटे तालाब हैं।

तालाब मध्य व दक्षिण भारत की विशेष परिस्थिति के द्योतक हैं। इसके कई कारण हैं—

- दक्षिण की नदियां हिमाच्छादित क्षेत्रों से नहीं निकलतीं। अतः वे वर्षा के जल पर ही निर्भर रहती हैं। इस प्रकार की नदियों और जल प्रपातों की अस्थायी दशा तथा दक्षिण का पहाड़ी धरातल होने से नहरों के निर्माण कार्य में बाधा पड़ती है।
- पठार की कठोर चट्टानें जल को सोख नहीं सकतीं इसलिए कुओं का निर्माण करना सरल नहीं है किन्तु वर्षा के जल को तालाबों में रोककर नालियों द्वारा खेतों तक पहुंचाया जा सकता है।
- दक्षिणी भारत की अधिकांश जनसंख्या बिखरी हुई है इससे तालाबों का बनाना ही उचित होता है।

तालाबों द्वारा सींचा जाने वाला सबसे अधिक क्षेत्र तमिलनाडु में पाया जाता है जहां लगभग 40000 तालाब हैं। सबसे अधिक तालाब तिरुचिरापल्ली जिले में हैं। चिंगलपुट, मदुरई, रामनाथपुरम्, तिरुन्नलवेली, दक्षिणी और उत्तरी अर्काट, सलेम, कोयम्बटूर और तंजौर जिलों में तालाबों द्वारा लगभग 7 लाख हेक्टेअर भूमि सींची जाती है।

आन्ध्र प्रदेश में निजामसागर, कर्नाटक में कृष्णाराजसागर और राजस्थान में जयसमन्द, राजसमन्द, कोटा झील, बालसमन्द जैसे मध्ययुगीन एवं जवाई, मेजा, खारीबांध एवं नदी-नालों को रोककर बनाए गए तालाब व झीलों द्वारा सिंचाई और पीने के लिए मीठे जल की प्राप्ति की जाती है।

अन्य प्रदेशों में तालाबों द्वारा सिंचाई झारखण्ड, छत्तीसगढ़, महाराष्ट्र, कर्नाटक एवं दक्षिणी-पूर्वी राजस्थान में भी की जाती है।

तालाबों के दोष

- तालाबों में जल केवल वर्षा द्वारा प्राप्त होता है, अतः जिस वर्ष वर्षा की कमी होती है तालाबों में भी जल कम हो जाता है, तब उनका उपयोग पेयजल के रूप में ही करना अनिवार्य हो जाता है।
- तालाबों में वर्षा का जल अपने साथ पर्याप्त मात्रा में मिट्टी बहाकर ले आता है और तालाब की तह में एकत्रित करता है। इससे तालाब भी छिछले होते जाते हैं।
- तालाब स्थान अधिक घेरते हैं।
- तालाबों से खेतों तक जल पहुंचाने में काफी श्रम, व्यय एवं समय लगता है। किन्तु इन दोषों के विपरीत तालाब दक्षिण भारत के लिए सिंचाई के अत्युत्तम साधन हैं क्योंकि वर्षा के जल का उपयोग इनके द्वारा ही सम्भव है। इनके द्वारा निकटवर्ती क्षेत्रों का जल-तल ऊंचा उठ जाता है जिससे कुएं बनाना भी सम्भव हो जाता है।

शुष्क क्षेत्र कृषि (Dry Area Farming)

शुष्क क्षेत्र कृषि की विशेषताएँ—

- **निम्न वर्षापात**— निम्न वर्षापात के आलावा इन क्षेत्रों में मानसून का विलंबन तथा शीघ्र वापसी जैसी अनिश्चितताएं भी देखी जा सकती

हैं। कभी-कभी दो नम चरणों के मध्य एक लंबा शुष्क चरण भी मौजूद रहता है।

- **सुनिश्चित सिंचाई का अभाव**—शुष्क भूमि क्षेत्रों में उगायी जाने वाली फसलें तथा फसल पद्धतियां पूर्णत: वर्षा पर निर्भर रहती है, जो प्राय: अनियमित तथा अनिश्चित होता है। इसी कारण शुष्क क्षेत्र कृषि को 'वर्षाधीन कृषि' भी कहा जाता है।
- **मुख्यत: जीविका खेती का प्रचलन**— जैविक खेती के मुख्य लक्षणों में निम्न उत्पादकता, निम्न आय, अनिश्चित उपज तथा निम्न पूंजी निर्माण शामिल है। ये क्षेत्र देश की सूखा ग्रस्त पेटी के अंतर्गत आते हैं तथा यहां की जनसंख्या को मानसून स्थगन या शुष्क मौसम के दौरान बेरोजगारी या अल्परोजगार की समस्या का सामना करना पड़ता है।

शुष्क क्षेत्र कृषि का महत्व

शुष्क क्षेत्रों या वर्षाधीन परिस्थितियों में उगायी जाने वाली फसलों में दालें (प्रोटीन का एक स्रोत, कुल उत्पादन का 85 प्रतिशत वर्षाधीन क्षेत्रों से प्राप्त), तिलहन (वसा का एक स्रोत, कुल उत्पादन का 75 प्रतिशत वर्षाधीन क्षेत्रों से), मूंगफली व मेस्टा (इसका लगभग संपूर्ण उत्पादन शुष्क क्षेत्रों से प्राप्त), प्रमुख खाद्य जैसे- ज्वार एवं बाजरा (इसका 95 प्रतिशत शुष्क क्षेत्रों में उगाया जाता है), मक्का (कुल उत्पादन का 80 प्रतिशत वर्षाधीन कृषि से) तथा जई शामिल हैं। यदि देश में उपलब्ध संपूर्ण सिंचाई क्षमता का दोहन कर लिया जाये तो भी देश के कुल कृषित क्षेत्र का लगभग आधा भाग वर्षाधीन कृषि के अंतर्गत बना रहेगा। यह तथ्य देश की अर्थव्यवस्था में शुष्क क्षेत्र कृषि के महत्त्व को रेखांकित करता है।

देश के कुल खाद्यान्न उत्पादन में शुष्क क्षेत्र कृषि का योगदान लगभग 40 प्रतिशत है। वर्षाधीन फसलों की उत्पादकता तथा उत्पादन में धीमी वृद्धि ने दालों व तिलहनों की प्रति व्यक्ति उपलब्धता में कटौती की है। इसलिए अब शुष्क क्षेत्रों पर अधिक ध्यान देना आवश्यक हो गया है। शुष्क क्षेत्र कृषि के तीन प्रमुख उद्देश्य हैं—(i) खाद्य सुरक्षा, (ii) अंतरक्षेत्रीय, अंतरवैयक्तिक तथा अंतरवर्गीय असमानताओं एवं पोषकीय न्यूनता की समाप्ति तथा (iii) ग्रामीण रोजगार।

शुष्क क्षेत्र कृषि की उत्पादकता बढ़ाने के उपाय

ये वैज्ञानिक कृषि पद्धतियां हैं जिनका उद्देश्य मृदा एवं नमी संरक्षण के माध्यम से उत्पादकता में सुधार लाना है।

- **समयबद्ध तैयारी तथा बीजारोपण गतिविधियां**—यह गहरी एवं सतही जुताई द्वारा किया जाता है। गहरी जुताई खरीफ की फसलों में सहायक होती है क्योंकि यह परतदार मृदा के नीचे की कठोर एवं संयुक्त परत को तोड़ देती है। गहरी जुताई के परिणामस्वरूप अधिकतम वर्षा जल भूमि के अंदर रिसता है तथा बीज बोने एवं खर-पतवार को नियंत्रित रखने में मदद मिलती है। सतही जुताई से रबी की फसल को लाभ पहुंचता है, क्योंकि यह मृदा की नमी को संरक्षित रखने में सहायक होती है।
- **प्रभावी खर-पतवार नियंत्रण**—गैर-मौसमी जुताई, समुचित बीज संस्तर निर्माण, समयबद्ध बुआई तथा खर-पतवार नाशकों के उपयोग इत्यादि उपायों से खर-पतवार को नियंत्रित किया जा सकता है।
- **वायु-अपरदन की रोकथाम**—यह शुष्क भूमि क्षेत्रों की एक सामान्य समस्या है। इसे पौध अवरोधों के निर्माण, रेत के टीलों के स्थिरीकरण, ठूंठीदार पलवार खेती तथा वनस्पति अवशिष्टों के आवरण द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। समोच्चरेखीय जुताई तथा समोच्चों के बंध निर्माण एवं खाईयों द्वारा भी वायु अपरदन को कम किया जा सकता है।
- **प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग**—इन किस्मों के तहत अल्पावधि वाली किस्में शामिल हैं जो विलंबित बुआई और गहरे रोपण वाली फसलों के लिए उपयुक्त होती हैं।
- **फसल विविधीकरण**—विभिन्न दलहन फसलों को अपनाकर वर्षाधीन क्षेत्रों में फसल उत्पादन को स्थिर रखा जा सकता है।
- **फलीदार पौधों का प्रयोग**—अनाज फसलों के साथ फलीदार पौधे लगाने से कृषि जोखिम को कम किया जा सकता है।
- **वैकल्पिक भूमि उपयोग का नियोजन**
  - (i) **कृषि वानिकी (Agro-Forestry)**—फलदार वृक्षों के साथ मटर और अरहर आदि फलीदार फसलों की मिश्रित कृषि।
  - (ii) **सीमांत भूमि एवं कृषि योग्य व्यर्थ भूमि के संबंध में**—स्वतंत्र कृषि, वन, चरागाह प्रबंधन तथा सामाजिक वानिकी।
- **भौतिक आधार संरचना का निर्माण**—इस संबंध में बांधों एवं समोच्च बंधों का प्रयोग, वानस्पतिक अवरोध (सतही जलप्रवाह को संग्रहीत करने हेतु) जैसी आधुनिक पद्धतियों के अलावा देश के विभिन्न भागों में खादिन (khadins) तथा रेला (rela) खेती जैसी परम्परागत पद्धतियों का प्रयोग भी किया जा रहा है।

शुष्क क्षेत्र कृषि के विकास हेतु सरकारी प्रयास

- बढ़ती हुई जनसंख्या की खाद्यान्न जरूरतों को पूरा करना तथा खाद्यानों के अलावा चारा, ईंधन लकड़ी एवं इमारती लकड़ी के उत्पादन में आने वाले उतार-चढ़ावों को न्यूनतम करना।
- सिंचित एवं वर्षाधीन क्षेत्रों के बीच मौजूद समाजार्थिक असमानताओं को समाप्त करना।
- वृक्षों, झाड़ियों एवं घासों के उपयुक्त मिश्रण द्वारा पारिस्थितिकी संतुलन को कायम रखना।
- ग्रामीण रोजगार की स्थिति में सुधार लाना तथा इस प्रकार ग्रामीण-शहरी अप्रवासन को नियंत्रित करना।
- एक लागत प्रभावी एवं संवहनीय भूमि उपयोग का विकास करना।

जल विभाजक परियोजना

जलविभाजक या वाटरशेड वह भौगोलिक इकाई है जो समान बिन्दु की तरफ जल प्रवाह को निर्धारित करता है। वर्षाधीन क्षेत्रों हेतु राष्ट्रीय जल-विभाजक विकास परियोजना (एन.डब्ल्यू.डी.पी.आर.ए) की

शुरुआत 1990-91 में की गई। इसके दो मूल उद्देश्य थे (i) बायोमास का संवहनीय उत्पादन तथा (ii) विस्तृत वर्षाधीन क्षेत्रों में परिस्थितिक संतुलन को कायम रखना। इसके लिए मुख्यत: निम्न बातों पर बल दिया गया—(i) भूमि, जल, पौधों, पशु एवं मानव संसाधन जैसी प्राकृतिक संपदा का निम्न लागत वाली प्रभावी तकनीक के साथ एकीकृत एवं सामंजस्यपूर्ण ढंग से संरक्षण, उन्नयन और उपयोग करना, (ii) रोजगार तथा (iii) सिंचित एवं वर्षाधीन क्षेत्रों के बीच असमानताओं को घटाना।

उक्त कार्यक्रम का लक्ष्य उन सभी सामुदायिक विकास खंडों की 2.8 मिलि. हेक्टेयर भूमि को शामिल करना है, जिनका कृषि योग्य भूमि का 30 प्रतिशत से भी कम सुनिश्चित सिंचाई साधनों के अंतर्गत आता है।

एकीकृत जल-विभाजन विकास में उपलब्धियां

1. काली एवं लाल मिट्टी वाले क्षेत्रों में समोच्चरेखीय कृषि द्वारा उपज में वृद्धि करना संभव हुआ है।
2. समोच्चों के पार वनस्पति अवरोध लगाने से नमी संरक्षण एवं उत्पादन वृद्धि में मदद मिली है।
3. इन परियोजनाओं के कारण फसल गहनता में वृद्धि हुई है।

राष्ट्रीय जल नीति (National Water Policy)

राष्ट्रीय जल संसाधन परिषद् द्वारा 1 अप्रैल, 2002 को आम सहमति से राष्ट्रीय जल नीति, 2002 को स्वीकृति प्रदान की गई है जो 1987 की जल नीति का स्थान लेगी। इस जल नीति में सब के लिए पेयजल की व्यवस्था को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की गई है। नई जल नीति में जल संसाधनों के एकीकृत प्रबन्धन और विकास के उद्देश्य से संस्थागत उपाय करने के साथ-साथ नदी जल और नदी भूमि सम्बन्धी विवादों के समाधान के लिए नदी बेसिन प्राधिकरण गठित करने पर बल दिया गया है। अन्तर्राष्ट्रीय जल-विवाद को नई संशोधित नीति के दायरे से बाहर रखा गया है। 2002 की जल नीति में जल संसाधनों के उपयोग की प्राथमिकताएं निम्नांकित प्रकार से तय की गई हैं :

1. सभी नागरिकों के लिए पेयजल की उपलब्धता
2. सिंचाई के लिए जल व्यवस्था
3. विद्युत उत्पादन हेतु जल की उपलब्धता
4. पारिस्थितिकी सन्तुलन के लिए नदियों में एक निर्धारित सीमा तक निरन्तर जल प्रवाह बनाए रखना
5. उद्योगों तथा परिवहन के लिए जल का उपयोग

इस प्रकार हमारी राष्ट्रीय जल नीति में जल को मानव जीवन तथा पशुओं के लिए, पारिस्थितिकी सन्तुलन बनाए रखने के लिए, आर्थिक तथा अन्य सभी विकासात्मक गतिविधियों को संचालित करने और जल की निरन्तर कमी होते जाने के कारण इसके उपयोग की उपयुक्त, सर्वहितकारी तथा मितव्ययी योजनाओं का उचित रीति से नियोजन तथा प्रबन्धन किया जाना अपरिहार्य समझा गया है और देश के सभी भागों में जल के समुचित उपयोग को सुनिश्चित करने, इसे प्रदूषण से बचाने तथा इसकी गुणवत्ता सुनिश्चित करने जैसी सभी आवश्यक व्यवस्थाएं करना आवश्यक बताया गया है।

राष्ट्रीय जल ग्रिड संकल्पना भारत में जल की आपूर्ति वर्षा, भूमिगत जल, नदियों, झीलों एवं समुद्रों द्वारा होती है। लेकिन देश में इन जल स्रोतों के वितरण में भौगोलिक विषमता है। देश के कुछ भाग वर्षभर जल से तर रहते हैं तो कुछ सूखे से त्रस्त रहते हैं। देश में जल वितरण की इस विषमता से निजात पाने के लिए एक 'राष्ट्रीय जल ग्रिड' की संकल्पना की गई है। इस संकल्पना का प्रमुख उद्देश्य नदियों द्वारा समुद्र तक पहुंचाए जाने वाले बहुमूल्य जल का समुचित नियोजन करना है। इसके अन्तर्गत देश की बड़ी नदियों को नहरों या लिंक द्वारा अन्तर्सम्बन्धित कर देश के जल बाहुल्य तथा जलाभाव वाले क्षेत्रों को भौगोलिक रूप से जोड़ा जाएगा तथा देश में जल संकट तथा जलाधिक्य वाले क्षेत्रों में जल संसाधन के आदान-प्रदान द्वारा सन्तुलन स्थापित किया जाएगा। उदाहरणस्वरूप गंगा-कावेरी लिंक द्वारा गंगा नदी का अतिरिक्त जल कावेरी बेसिन तक पहुंचाया जाएगा। इसी प्रकार चम्बल-राजस्थान लिंक द्वारा चम्बल नदी का जल राजस्थान के सूखाग्रस्त क्षेत्रों तक पहुंचाया जाएगा। उच्चतम न्यायालय ने भी सरकार को देश की प्रमुख नदियों को सन् 2012 तक आपस में जोड़ने का ऐतिहासिक निर्देश दिया है। राष्ट्रीय जल ग्रिड संकल्पना के प्रमुख बिन्दु निम्नलिखित हैं:

- सूखाग्रस्त क्षेत्रों को सिंचाई के लिए जलापूर्ति सुनिश्चित करना।
- वर्षाकालीन अतिरिक्त जल का देश के विभिन्न भागों में बनाए जाने वाले कृत्रिम जलाशयों में संचय।
- लिंक एवं नहरों द्वारा शुष्क तथा अर्द्धशुष्क क्षेत्रों की 35 मिलियन हेक्टेयर अतिरिक्त भूमि की सिंचाई, तथा
- पठारी भागों में निर्मित लिंक हेतु बनाए गए जलाशयों तथा बांधों से लगभग 40 मिलियन किलोवाट अतिरिक्त विद्युत का उत्पादन करना।

राष्ट्रीय जल ग्रिड के निर्माण द्वारा देश की नदियों द्वारा बहाए गए कुल जल का लगभग 77 प्रतिशत भाग उपयोग में लाया जा सकेगा।

राष्ट्रीय जल ग्रिड योजना कोई नई योजना नहीं है। इस योजना के तहत प्रधानतः अन्तर्बेसिन लिंक की दो दिशाएं होंगी। एक उत्तर से दक्षिण तथा दूसरी पूरब से पश्चिम। सरकार ने इस योजना को पूरा करने का काम अपने हाथों में लिया है तथा इसका **शुभारंभ अगस्त, 2005 में केन एवं बेतवा नदियों को आपस में जोड़ने के लिए सहमति पत्र पर हस्ताक्षर** होने के साथ ही हो चुका है।

प्रमुख प्रस्तावित योजनाएं—1. गंगा-कावेरी लिंक, 2. गंगा-ब्रह्मपुत्र लिंक, 3. नर्मदा से गुजरात तथा पश्चिमी राजस्थान की नहर, 4. चम्बल-राजस्थान लिंक, 5. पश्चिमी घाट की नदियों का पूर्व स्थित वृष्टिछाया प्रदेश से लिंक।

तालिका 20.1: प्रमुख बहुउद्देशीय परियोजनाएँ

परियोजना का नाम	नदी	लाभान्वित राज्य	महत्वपूर्ण तथ्य
भाखड़ा नांगल परियोजना	सतलुज	पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश	• संसार का सबसे ऊँचा गुरूत्वीय बांध, देश की सबसे बड़ी बहुउद्देशीय परियोजना बांध के पीछे स्थित झील का नाम गाविन्द सागर (हिमांचल प्रदेश) है।
दामोदर घाटी परियोजना	दामोदर	झारखण्ड, प. बंगाल	• स्वतंत्र भारत की पहली (1948) बहुउद्देशीय नदी घाटी परियोजना है एवं संयुक्त राज्य अमेरिका की टेनेसी नदी घाटी योजना पर आधारित है।
हीराकुंड बांध परियोजना	महानदी	ओडिशा	• **विश्व का सबसे लम्बा नदी बांध है।** इस बांध से तीन मुख्य नहर निकाली गई हैं-बोरागढ़, सासन और सबलपुर नहर।
चम्बल परियोजना	चम्बल	राजस्थान, म.प्र.	चम्बल नदी पर तीन जगह बांध बनाये गये है:- 1. गांधी सागर बांध—म.प्र. 2. राणाप्रताप सागर बांध—राजस्थान 3. जवाहर सागर बांध—राजस्थान
मयूराक्षी परियोजना	मयूराक्षी	प. बंगाल	• इसे मनजोसर या कनाडा बांध कहते है।
रिहन्द बांध परियोजना	रिहन्द	उ.प्र., म.प्र.,	• इस बांध के पीछे गोविन्द बल्लभ पंत सागर नामक कृत्रिम झील है जो उ.प्र. और छत्तीसगढ़ की सीमा पर स्थित है।
टिहरी परियोजना	भागीरथी	उत्तराखण्ड	इसके अंतर्गत भारत के सबसे ऊँचे बांध (टिहरी बांध) का निर्माण किया गया है।
नर्मदा घाटी परियोजना	नर्मदा नदी	गुजरात, म.प्र.,	इसमें गुजरात में सरदार सरोवर बांध एवं मध्यप्रदेश में नर्मदा या महाराष्ट, राजस्थान इंदिरा सागर बांध का निर्माण किया गया है।

तालिका 20.2: अन्य प्रमुख बहुउद्देशीय परियोजना

परियोजना	नदी	लाभान्वित राज्य	उद्देश्य
माताटीला परियोजना	बेतवा	उ.प्र., म.प्र.	विद्युत एवं सिंचाई
फरक्का बैराज परियोजना	हुगली	प. बंगाल	सिंचाई एवं नौपरिवहन
तुंगभद्रा परियोजना	तुंगभद्रा	कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश	विद्युत उत्पादन एवं सिंचाई
नागार्जुन सागर परियोजना	कृष्णा	आन्ध्र प्रदेश	विद्युत उत्पादन एवं सिंचाई
स्वर्ण रेखा परियोजना	स्वर्ण रेखा	झारखण्ड	जल विद्युत एवं सिंचाई
घाट प्रभा परियोजना	घाट प्रभा	कर्नाटक	जल विद्युत एवं सिंचाई
मेटूर परियोजना	कावेरी	तमिलनाडु	जलविद्युत
इडुक्की परियोजना	पेरियार	केरल	जलविद्युत
शरावदी परियोजना	शरावती	कर्नाटक	जलविद्युत
साबरमती परियोजना	साबरमती	गुजरात	जलविद्युत

(Continued)

परियोजना	नदी	लाभान्वित राज्य	उद्देश्य
तवा परियोजना	तवा	म.प्र.	सिंचाई
पोंग बांध परियोजना	व्यास	हिमाचल प्रदेश	जल विद्युत, सिंचाई
तुलबुल परियोजना	झेलम	जम्मू कश्मीर	जल परिवहन
पापनाशम परियोजना	ताम्रपर्णी	तमिलनाडु	जल विद्युत
तिस्ता परियोजना	तिस्ता	सिक्किम	जल विद्युत एवं बाढ़ नियंत्रण
बाण सागर परियोजना	सोना नदी	म.प्र., उ.प्र., बिहार	जल विद्युत, सिंचाई

तालिका 20.3: भारत और पड़ोसी देशों के साथ नदी परियोजना

परियोजना	देश	नदी
चुखा जलविद्युत परियोजना	भारत-भूटान	वांग्चू
ताला परियोजना	भारत-भूटान	वांग्चू
संकोश परियोजना	भारत-भूटान	संकोश
टनकपुर बांध परियोजना	भारत-नेपाल	महाकाली
कोसी परियोजना	भारत-नेपाल	महाकाली
पंचेश्वर परियोजना	भारत-नेपाल	महाकाली
शारदा परियोजना	भारत-नेपाल	काली नदी

तालिका 20.4: भारत-पाकिस्तान के मध्य विवादित जल विद्युत परियोजना

परियोजना	नदी
दुल्हस्ती जल विद्युत परियोजना	चिनाब
सलाल परियोजना	चिनाब
किशनगंगा परियोजना	किशनगंगा
बगलिहार बांध परियोजना	चिनाब
किरथई बांध परियोजना	चिनाब
सावाल कोट बांध परियोजना	चिनाब

तालिका 20.5: मुख्य नदी जल विवाद

मुख्य नदी जल विवाद	संबंधित राज्य
कावेरी जल विवाद	कर्नाटक, तमिलनाडु, केरल, पांडिचेरी
कृष्णा जल विवाद	महाराष्ट्र, आंध्रप्रदेश, कर्नाटक
गोदावरी नदी जल विवाद	आंध्रप्रदेश, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, कर्नाटक, ओडिशा
नर्मदा नदी जल विवाद	मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, राजस्थान
बराक नदी जल विवाद	बिहार, उत्तर प्रदेश
रावी व व्यास नदी जल विवाद	हरियाणा, पंजाब दिल्ली, जम्मू कश्मीर, राजस्थान
यमुना नदी जल विवाद	उत्तर प्रदेश, हिमांचल प्रदेश, हरियाणा, पंजाब, दिल्ली, राजस्थान, मध्यप्रदेश

अध्याय सार संग्रह

- सतही सिंचाई की तुलना में ड्रिप सिंचाई से 30 से 40 प्रतिशत तक पानी की बचत होती है और प्रति हेक्टेयर उपज भी 20 से 25 प्रतिशत अधिक प्राप्त होती है।
- उड़ीसा में पानी पंचायत योजना सितम्बर, 2000 से प्रारम्भ की गई है। इसके अन्तर्गत किसानों की प्रत्येक पंजीकृत सोसायटी को 500 हेक्टेयर की सिंचाई प्रणाली का रख-रखाव सौंपा जाएगा।
- देश के लगभग 12 प्रतिशत भू-भाग को बाढ़ की आशंका वाला क्षेत्र माना गया है।
- अन्तर्राज्यीय जल विवाद को निपटाने के लिए अब तक (1) गोदावरी, (2) कृष्णा, (3) नर्मदा, (4) कावेरी और (5) रावी-व्यास नदियों के जल-विवाद ट्रिब्यूनल बनाए गए हैं।
- जल संसाधनों के समुचित विकास के लिए कारगर उपाय सुनिश्चित करने के लिए राष्ट्रीय जल बोर्ड का गठन सितम्बर, 1990 में किया गया।
- राष्ट्रीय जल संसाधन परिषद की स्थापना भारत सरकार द्वारा मार्च, 1983 में शीर्ष राष्ट्रीय संगठन के रूप में की गई है।
- केन्द्रीय जल तथा विद्युत अनुसंधान केन्द्र, पुणे जल और ऊर्जा संसाधन विकास तथा जल परिवहन से सम्बन्धित परियोजनाओं के लिए व्यापक अनुसन्धान एवं विकास सहायता उपलब्ध कराता है। इस केन्द्र को 1971 में एशिया प्रशान्त आर्थिक-सामाजिक आयोग की क्षेत्रीय प्रयोगशाला के रूप में मान्यता मिली है।
- केन्द्रीय भूमिगत जल बोर्ड राष्ट्रीय स्तर पर भूमिगत जल संसाधनों के वैज्ञानिक विकास और उनके प्रबन्ध के लिए जिम्मेदार है।
- गंगा बाढ़ नियन्त्रण आयोग, पटना की स्थापना 1972 में की गई। आयोग को गंगा नदी प्रणाली में बाढ़ नियंत्रण की व्यापक योजनाएं तैयार करने का कार्य सौंपा गया है।
- राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान, रूड़की की स्थापना 1979 में जल विज्ञान के सभी पहलुओं में व्यवस्थित और वैज्ञानिक कार्य शुरू करने, उन्हें बढ़ावा देने और उनमें समन्वय स्थापित करने के उद्देश्य से की गई थी।
- सहभागी सिंचाई प्रबन्धन के बारे में भारतीय नेटवर्क की स्थापना 1998 में की गई है।
- स्वतंत्रता के बाद भारत में कुल सिंचित क्षेत्र लगभग चार गुना बढ़ गया है।
- भारत की 850 लाख हेक्टेयर भूमि सिंचित है।
- शुद्ध बोए गए क्षेत्र के लगभग 38% भाग में सिंचाई होती है।
- मिजोरम में कुल बोए क्षेत्र का 7.3% ही सिंचित है, जबकि पंजाब में 90.8% है।